समावेशी शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में समस्याएँ: अल्मोड़ा के लमगारा ब्लाक का अवलोकन

जयश्री पाण्डे

समावेशी शिक्षा की अवधारणा भारत के लिए नई नहीं हैं, पर यह व्यापक प्रचलन में पिछले दशक में आई जब शिक्षा का अधिकार (आर.टी.ई.) एक मूलभूत अधिकार बन गया। समावेशी शिक्षा में निहित मूल विचार यह है कि प्रत्येक बच्चे के साथ समान व्यवहार किया जाए और उसे उसकी अन्तर्निहित सही क्षमता को साकार करने का पर्याप्त अवसर दिया जाए। इसमें स्कूल के भीतर ऐसी शिक्षण पद्धतियों का उपयोग भी निहित है जिनमें प्रत्येक बच्चे, चाहे उसकी जाति, वर्ग, विशिष्ट संस्कृति, लिंग तथा योग्यता के अन्तर जो भी हों, की जरूरतों पर समुचित ध्यान दिया जाए।

हालाँकि समावेशी शिक्षा की नीति मित्रतापूर्ण, प्रभावशाली और अलग–अलग क्षमताओं वाले बच्चों की विविध प्रकार की जरूरतों का समाधान करने वाली प्रतीत होती है, परन्तु अकसर इसका लापरवाह क्रियान्वयन जमीनी वास्तविकता की चिन्ताजनक तस्वीर पेश करता है।

यह लेख सरकारी नीतियों की खामियों, समुदाय तथा शिक्षकों के उदासीन और गैर–जिम्मेदाराना रवैए तथा विशेष शिक्षा प्रदान करने वालों की अत्यधिक उत्साह हीनता को दर्शाता है, जो सब मिलकर इस सराही जाने वाली समावेशी शिक्षा नीति के अल्मोड़ा के लमगारा ब्लाक में लागू किए जाने की निराशाजनक कथा चित्रित करते हैं।

क्षेत्र में किए गए कुछ अवलोकन

अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के फैलोशिप कार्यक्रम के अंग के रूप में फैलोज को सरकारी शिक्षा व्यवस्था की जटिलताओं को तथा कक्षा के भीतर होने वाली शिक्षण प्रक्रियाओं को समझने के लिए स्कूलों का विस्तृत अवलोकन करना आवश्यक होता है।

अल्मोड़ा जिले के लमगारा ब्लाक, जो अल्मोड़ा के बहुत फैले हुए ब्लाकों में से एक है, में मुझे अक्षमता ग्रस्त बच्चों के लिए निर्धारित नीति के क्रियान्वयन में कुछ स्पष्ट समस्याएँ दिखाई दीं जिनको मैं यहाँ रेखांकित करना चाहूँगी।

मुख्य धारा में लाना या अलग समूहों में सीमित कर देना

समावेशी शिक्षा का अभिप्राय अक्षमता ग्रस्त बच्चों को शिक्षा के दायरे में लाना और चाहे विशेष स्कूलों में या फिर सामान्य स्कूलों में उन्हें उनकी जरूरतों के अनुसार सीखने का उपयुक्त वातावरण देना होता है। साथ ही, सर्व शिक्षा अभियान (एस.एस.ए.) में 'किसी को भी अस्वीकार न करने' की नीति हर बच्चे को शिक्षा का अधिकार देती है और ऐसे बच्चों को स्कूल की मुख्यधारा में शामिल किए जाने का समर्थन करती है। परन्तु संसाधनों के पर्याप्त सहारे के बिना और हर बच्चे पर अलग से ध्यान न दिए जाने से ये बच्चे स्कूलों के भीतर अलग समूहों में सीमित हो जाते हैं।

लमगारा ब्लाक में कोई विशेष स्कूल न होने से विशेष जरूरतों वाले अनेक बच्चे नियमित स्कूलों में ही दाखिला लिए हुए हैं और ज्ञान के स्तरों की दृष्टि से कुछ भी सीखे बगैर कक्षाओं की सीढ़ियाँ चढ़ रहे हैं। मैं स्कूलों के एक निरीक्षण के दौरान एक ऐसे बच्चे से मिली जो पढ़ना, लिखना, बोलना, कुछ भी नहीं कर सकता, पर वह कक्षा 4 में पढ़ रहा है। नियमित स्कूलों में पूर्व–एकीकरण कार्यक्रमों के अभाव तथा अपर्याप्त सहारे के बिना ऐसे बच्चों को मुख्यधारा में शामिल करना महज एक औपचारिकता बन कर रह जाता है।

शिक्षकों की शिक्षा के कार्यक्रम

कक्षाओं में समावेशी वातावरण प्रदान करने के काम में शिक्षकों की शिक्षा एक कमजोर कड़ी बनी हुई है। शिक्षकों की शिक्षा की डिग्री तथा डिप्लोमा कार्यक्रमों में विशेष जरूरतों वाले बच्चों की शिक्षा में विशेषज्ञता हासिल करने का कोई प्रावधान नहीं है। यह ऐसे कार्यक्रमों तथा उनके द्वारा इस विशेष क्षेत्र में शिक्षकों की तैयारी के अत्यधिक महत्त्व को समझने में सरकार की अक्षमता को दर्शाता है।

अल्मोड़ा में कोई विशेष स्कूल न होने के कारण, नियमित शिक्षकों में ऐसे बच्चों की जरूरतों और आकांक्षाओं की

समझ निर्मित करने का महत्त्व बढ़ जाता है। उपयुक्त ज्ञान और प्रशिक्षण के न होने से नियमित शिक्षकों को ऐसी गतिविधियों में संलग्न पाया गया जो ऐसे बच्चों की सर्वांगीण वृद्धि और विकास के लिए नुकसानदायक हैं। स्कूल स्तर पर किए गए एक अवलोकन में देखा गया कि एक शिक्षक ने एक अक्षमता ग्रस्त बच्चे को दूसरे बच्चों से अलग बैठा दिया क्योंकि मध्यान्ह भोजन के दौरान वह अपना खाना उनकी थालियों में फेंककर उन्हें परेशान करता हुआ पाया गया। चूँकि वह कक्षा में दूसरे बच्चों के काम में बाधा डालता है, इसलिए उसे अलग बैठकर काम करना पड़ता है। पर क्या उसका पृथक्करण ऐसी समस्या का सही समाधान है? इस बारे में कोई दो मत नहीं हो सकते कि ऐसे बच्चों को उनके हमउम्र साथियों, शिक्षकों और समुदाय के द्वारा समानुभूतिपूर्वक देखे जाने और स्वीकार किए जाने की आवश्यकता होती है। वे केवल तभी पनप सकते हैं।

सेवाकाल के दौरान शिक्षकों की शिक्षा

शिक्षकों का प्रशिक्षण समावेशी शिक्षा नीति के अन्तर्गत आने वाले उसके नितान्त आवश्यक अंगों में से एक है और यह उसका सबसे चिन्ताजनक पहलू भी है। स्कूल के स्तर पर इस नीति को लागू करने के लिए शिक्षकों में इसके प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण होना बेहद जरूरी है। कक्षाओं के भीतर विविध प्रकार की चुनौतियों का समाधान करने के लिए तथा विशेष जरूरतों वाले बच्चों के सीखने के लिए अनुकूल वातावरण निर्मित करने के लिए शिक्षकों में आवश्यक कौशलों तथा आत्मविश्वास को विकसित करना एक बहुत बड़ा काम है। इसके लिए शिक्षकों को प्रशिक्षण, विशेषज्ञों के सहयोग आदि संसाधनों के पर्याप्त सहारे की आवश्यकता होती है।

सुनने की अक्षमता से ग्रस्त बच्चों की शिक्षा के विशेषज्ञ श्री ब्रजेन्द्र यादव, जो लमगारा में उपलब्ध एकमात्र स्रोत शिक्षक हैं, से बातचीत में मुझे पता चला कि उनके तीन साल के कार्यकाल में समावेशी शिक्षा पर प्रशिक्षण उस ब्लाक में पहली बार 2014 में आयोजित किया गया। इस मुद्दे के प्रति प्रशासन की अगम्भीरता को इस तथ्य से आँका जा सकता है कि 2009 में आर.टी.ई. अधिनियम के पारित हो जाने, और समावेशी शिक्षा नीति को बढ़ी हुई सहायता प्राप्त होने के बाद भी प्रशिक्षणों की संख्या मामूली है और उनकी गुणवत्ता बहुत निम्न स्तर की है।

स्कूलों में सीखने–सिखाने की समावेशी प्रक्रियाओं को कार्यरूप में परिणित करने का सपना साकार करने में शिक्षकों का नकारात्मक रवैया सहायक सिद्ध नहीं होगा। प्रशिक्षण की निम्नस्तरीय गुणवत्ता को शिक्षकों के उदासीन रवैए का एक कारक बताया जा सकता है, परन्तु इस कार्य के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण है अक्षमता के जटिल मुद्दे की समझ निर्मित करने के लिए शिक्षकों की इच्छा होना, जिसमें प्रशिक्षण बहुत उपयोगी हो सकते हैं।

अपर्याप्त स्रोत शिक्षक

सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत हर अक्षमता ग्रस्त बच्चे को, पर्याप्त सहायक सेवाएँ उपलब्ध कराते हुए, पास–पड़ोस के स्कूल में दाखिल कराया जाना चाहिए। आर.टी.ई. अधिनियम में ऐसे बच्चों के विशेष प्रशिक्षण, चाहे वह आवासीय हो या गैर–आवासीय, के लिए प्रावधान किया गया है।

श्री यादव को विभिन्न जगहों पर रह रहे 89 अक्षमता ग्रस्त बच्चों की देखरेख करना पड़ती है जिसको निभाना अत्यन्त कठिन कार्य है। पहाड़ी क्षेत्रों की भौगोलिक बाधाओं को देखते हुए कभी–कभी उनके दौरों के बीच में 2 से 6 माह तक बीत जाते हैं। अब हम समझ सकते हैं कि ऐसे बच्चों को किस प्रकार की शैक्षिक सहायता प्राप्त हो रही है और वह किस हद तक उनके लिए लाभकारी सिद्ध हो सकती है। वे स्वयं भी स्वीकार करते हैं कि एक अकेला शिक्षक इन बच्चों के लिए नाकाफी है। वे केवल सुनने की बाधा के विशेषज्ञ हैं, इस कारण से अन्य परेशानियों से ग्रस्त बच्चों की उचित ढंग से देखभाल नहीं हो पाती है।

स्रोत शिक्षकों को अनुबन्ध पर नियुक्त करना अक्षमता ग्रस्त लोगों को सशक्त बनाने की राह में एक अन्य बड़ी रुकावट है। हम इस बात से इंकार नहीं कर सकते कि इन बच्चों को स्रोत शिक्षक से निरन्तर शैक्षिक तथा भावनात्मक सहारे की जरूरत होती है, जिसका अभाव सामाजिक तथा जीवनोपयोगी कौशलों को प्राप्त करने की उनकी सम्भावनाओं को बाधित करता है। श्री ब्रजेन्द्र यादव के शब्दों में, जिनका अनुबन्ध हाल ही में समाप्त हो गया, "हो सकता है कि मैं कभी रहूँ कभी न रहूँ, पर मेरे बच्चे अभी भी वहाँ हैं जिनको हर समय मेरी जरूरत है, उनकी देखभाल कौन करेगा?"

ऐसे बच्चों को घर पर शिक्षा देने वाले प्रशिक्षक या तो उनके माता–पिता होते हैं या समुदाय के शिक्षित सदस्य होते हैं जिन्हें डाइट (जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान) में साल में एक बार प्रशिक्षण दिया जाता है। एक सामान्य गैर–विशेषज्ञ व्यक्ति के लिए अक्षमता ग्रस्त बच्चों तथा

उनके संज्ञानात्मक, भावनात्मक और व्यवहार सम्बन्धी पहलुओं को समझने के लिए ये कुछ दिनों के प्रशिक्षण सत्र काफी नहीं होते। लमगारा के स्रोत शिक्षक के शब्दों में, 'घर पर आधारित शिक्षा तो ज्यादातर सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत उसके लिए दिए जाने वाले 500 रु. प्रति माह कमाने का एक साधन बन गई है।'

सहयोग न करने वाले माता–पिता तथा समुदाय

अक्षमता का एक सामाजिक पहलू भी होता है जिसमें परिवार तथा समुदाय अक्षमता ग्रस्त बच्चे की अन्तर्निहित क्षमता को विकसित करने और उसके जीवन के स्वरूप को निर्मित करने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

समावेशी शिक्षा में यदि ऐसे बच्चों के परिवार सहयोग नहीं देते तो उसकी ओर बढ़ने के सभी प्रयास निष्फल होंगे। श्री यादव के साथ बातचीत में यह बात बहुत मजबूती से निकलकर आई क्योंकि अक्षमता ग्रस्त बच्चों के अधिकांश माता–पिता उनके द्वारा संचालित किए जाने वाले जागरूकता और जानकारी सत्रों में भाग लेने के लिए राजी नहीं होते। वे खुले शब्दों में कहते हैं कि यदि उन्हें पैसा मिलेगा तो वे आएँगे। माता–पिता के ऐसे व्यवहार के पीछे कई कारण हो सकते हैं, जैसे कि गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता, जागरूकता का अभाव आदि। पहाड़ी क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों के न होने की वजह से अधिकांश परिवार दैनिक मजदूरी पर मेहनत के कामों में लगे रहते हैं। उनके लिए एक प्रशिक्षण सत्र में शामिल होने का मतलब उस दिन की कमाई से वंचित होना होता है। इसके अलावा, निरक्षरता और अज्ञान के कारण अक्षमता ग्रस्त बच्चे की स्थिति को कभी–कभी भ्रामक रूप से एक दैवीय आपदा मान लिया जाता है और कहा जाता है कि इसे स्थानीय चिकित्सकों, ओझाओं आदि के द्वारा अच्छा किया जा सकता है।

आगे की राह

ऐसे गम्भीर तथा जटिल मुद्दे के समाधान के लिए कोई एक उपयुक्त निष्कर्ष नहीं हो सकता, लेकिन अल्मोड़ा के लमगारा ब्लाक में इस नीति के शाब्दिक और वास्तविक अर्थ में क्रियान्वयन के लिए कुछ प्रस्ताव सामने रखे जा सकते हैं :

- ऐसे बच्चों के लिए कम से कम 90 दिन के सेतु कार्यक्रम किसी ऐसे निर्धारित स्थान पर संचालित करना जहाँ वे साथ–साथ रह सकें और अध्ययन कर सकें। उनके लिए एक ऐसा दिनचर्या का कार्यक्रम और पाठ्यचर्या होगी जिससे वे अधिक से अधिक लाभ ले सकें।
- प्रशिक्षणों का प्रभावशील न होना उनके प्रति शिक्षकों के अरुचिपूर्ण रवैए का एक कारण हो सकता है। कमरों की चारदीवारियों के भीतर प्रशिक्षणों को संचालित करने के बजाय उन्हें क्षेत्र में ऐसे बच्चों के साथ किया जा सकता है। यह शिक्षकों को ऐसे बच्चों तथा उनकी आवश्यकताओं को समझने के लिए जरूरी आत्मविश्वास प्रदान करेगा।
- ऐसे बच्चों के माता–पिताओं को स्कूल प्रबन्धन समितियों में शामिल करके उनकी भागीदारी सुनिश्चित करना तथा अक्षमता ग्रस्त बच्चों की समस्याओं पर प्रशिक्षण सत्रों को समितियों के कार्यक्रमों में सूचीबद्ध करके निर्धारित करना।
- ऐसे बच्चों के सीखने की उपलब्धियों को बेहतर बनाने के लिए स्रोत शिक्षकों की पर्याप्त संख्या और उनकी निरन्तर उपस्थिति बेहद जरूरी है।
- शिक्षकों की शिक्षा के कार्यक्रमों में 'अक्षमता के अध्ययन' के लिए पर्याप्त स्थान देना।

जयश्री पाण्डे अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के 2013–15 के बैच की फैलो हैं। वे वीमन एण्ड जेण्डर स्टडीज (महिलाएँ तथा लिंगभेद अध्ययन) में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त हैं। उन्हें बच्चों से लगाव है और उनका लक्ष्य समाज के वंचित वर्गों के बच्चों के लिए काम करना है। उनसे jayshree.pande@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : भरत त्रिपाठी